❖ ओ३म् ❖

आर्ष-ज्योतिः

श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास
का
द्विभाषीय मासिक मुखपत्र

पौष-माघमासः, विक्रम संवत् - २०७२

वर्ष : ७ | अंक ९२ | जनवरी २०१६ | मूल्य : ५.०० रुपये

ज्योतिष्कृणोति सूनरी

संरक्षक - संस्थापक
स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती
❖
परामर्शदाता
डॉ. रघुवीर वेदालङ्कार
❖
मुख्य सम्पादक
डॉ. धनञ्जय आर्य (अवैतनिक)
❖
सम्पादक
चन्द्रभूषण आर्य
रवीन्द्र आर्य
❖
कार्यकारी सम्पादक
ब्र. शिवदेव आर्य
❖
व्यवस्थापक
ब्र. जितेन्द्र आर्य
❖
कार्यालय
श्रीमद्दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरुकुल
दून वाटिका-२, पौंधा, देहरादून (उत्तराखण्ड)
दूरभाष - ०१३५-२१०२४५१
जंगमवाणी - ०९४१११०६१०४
ई-मेल : arsh.jyoti@yahoo.in
website: www.pranawanand.org
❖
सदस्यता शुल्क
आजीवन - १०००.०० रुपये
वार्षिक - ५०.०० रुपये/ एक प्रति - ५ रुपये

विषय-क्रमणिका

विषयः	पृष्ठः
सम्पादकीय	२
अथ पाणिनीय सूत्राणाम्...	५
अज्ञान, अन्याय, अभाव, शोषण मुक्त...	६
पञ्चमहायज्ञ	८
जब अंग्रजों ने भारत छोड़ा	१२
माताओं का उपकार	१६
गागर में सागर..दयानन्द सागर	१७
ब्रह्मचर्याचारः	१९
संस्कृत-शिक्षणम्	२०

नीमीतीरे सततसुखदे सर्वतो दर्शनीयम्,
पौन्धाग्रामे नगरनिनदाद् दूरमीक्ष्यं मनुष्यैः।
हैमे तुङ्गे शिखरिशिखरे शोभनोपत्यकायाम्,
आर्षज्योतिर्मठगुरुकुलं राजते संसृतौ मे।। **रवीन्द्रकुमारः**

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः

सम्पादक की कलम से...

जीवन का संघर्ष

मानवीय मूल्य अथवा जीवन मूल्यों का तात्पर्य जीवन के प्रति मौलिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करना है। आज तक के इतिहास में मानव शास्त्रियों के लिए जीवन एक पहेली-सा बना हुआ है। मनुष्य इस संसार में जन्म लेता है और कुछ वर्षों के पश्चात् मृत्यु के पाशों में बन्ध जाता है।

वर्तमान संसार में विभिन्न सम्प्रदाय और विज्ञान के बीच भयंकर संघर्ष चल रहा है कि जीवन की यथार्थता क्या है? विज्ञान के आविष्कारों ने हमें यह मानने के लिये बाध्य कर दिया कि जीवन को जीने का दृष्टिकोण आर्थिक और सामाजिक आवश्यकताओं पर भी आधारित है। परिणामत: हमारा आज का जीवन मूल्य बहुत कुछ विज्ञान की देन है। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या विज्ञान अपनी समस्त उपलब्धियों के होते हुये भी हमारे जीवन मूल्य निर्धारित करने में सक्षम है अथवा नहीं?

यह तो ठीक है कि विज्ञान के प्रभाव और आर्थिक दृष्टिकोण से अपनाये गये जीवन मूल्यों का अपनाने के आलोक में मानवता ने अपने ऊपर लदे हुये परम्परागत विश्वासों तथा तज्जन्य शिथिलता मृत भार को उतार फेंका और प्रगति का मार्ग अपनाया। मनुष्य ने जीवन के वैविध्य साधनों की बहुत अधिक अभिवृद्धि कर ली है परन्तु इसके दुष्परिणाम भी कुछ कम नहीं हैं। इसके द्वारा एक मात्र जैव मूल्यों को ही प्रामाणिक मानने के कारण जीवन के स्तर मूल्यों का समाज में धीरे-धीरे लोप-सा हो रहा है। सहयोगियों के मध्य पारस्परिक सहयोग और प्रेम के स्थान पर प्रतियोगिता और कटुता बढ़ती ही चली जा रही है। हमें किसी न किसी प्रकार से सबसे आगे बढ़ना है इसके लिये हम दूसरों को भ्रमित कर सकते हैं, धक्का दे सकते हैं और फिर उनके ऊपर पैर रखकर शीघ्र प्रगति के लिये छलांग मार सकते हैं। ओलम्पिक दौड़ में तो कुछ पर्यवेक्षक होते हैं, जो स्थिरता के साथ सद् और असद् आचरण का विवेक करते हैं किन्तु आज की दौड़ में जीवन स्वयं पर्यवेक्षक बन दौड लगा रहा है। क्या व्यवसाय, क्या सेवायें, क्या संस्थायें, क्या फैक्ट्री में कार्यरत कर्मचारी, क्या राष्ट्रिय व्यवस्थायें, क्या अन्तर्राष्ट्रिय गतिविधियाँ सर्वत्र आपाधापी लगी हुई है। फैक्ट्रीकर्मचारी के चुनाव से लेकर राष्ट्रिय-अन्तर्राष्ट्रिय चुनावें को मर्यादायें व नियम केवल पुरातन उपदेश प्रतीत होने लगे हैं। हाहाकार, चीत्कार, एक दूसरे में परस्पर वैमनस्य उत्पन्न करा देना राजनीतिक की दौड़ जैव मूल्यों को भी पीछे धकेल कर जीवन का कोई भी मूल्य नहीं होता, न कोई संविधान, न नियम और न ही प्रतिबद्धता, कुछ भी तो नहीं होता है। केवल सफलता प्राप्त करना ही मूल्य अवशिष्ट-सा रह जाता है। ऐसा सर्वत्र प्रतीत होता है। इस प्रगति का गन्तव्य क्या है? क्या उद्देश्य है?

जब आधुनिक मानव विश्व को विनाश के कगार पर खड़ा हुआ पाता है तो उसे जीवनधारा को बदलने की आवश्यकता प्रतीत होने लगी है। यही कारण है कि इस समय क्या व्यक्ति, क्या राष्ट्र सभी इस धुन में लगे हुये है कि जेब कैसे भरी जाये। राष्ट्रों की कूटनीति आज बहुत कुछ इसी के चारों ओर चक्कर काट रही है। हम किस प्रकार समस्त विश्व में अपना माल निर्यात करें, इसको सोचकर विशेष विज्ञापन बनाकर शोर मचाते हैं, जिससे सभी लोग हमारा ही माल खरीदें। हम किन-किन देशों को किन-किन देशों से लड़वा दें कि वे हमसे लड़ाई में अस्त्र-शस्त्र अधिक से अधिक खरीदें। इस प्रकार के नानाविध प्रयास हमारी राजनीति तथा अर्थनीति के ध्रुवीय बिन्दु बन गये हैं। इस अवस्था के कारण विश्व मंच पर यह विचार उभर कर ऊपर आया है कि आण्विक हथियारों होड़ से विश्व विनाश के कगार पर जा खड़ा हुआ है। हमें

आण्विक हथियारों को कम करना चाहिए। यह तथ्य इस बात को मानने को विवश करता है कि जैव मूल्यों की अपेक्षा मानवीय मूल्यों का समाज निर्माण में तथा समाज की संरचना में अधिक महत्व है। जैसे राष्ट्र को एक संविधान की आवश्यकता होती है, समाज को सुचारू रूप में चलाने के लिये राज्य नियम बनाते हैं। इसी प्रकार मनुष्य स्वयं से लेकर समाज के समस्त वर्गों को अपने ही नियमों से प्रतिबद्धित करना होगा। आओं विज्ञान के सुख का समुचित उपभोग करने के लिये एवं पूर्णरूपेण सुखी जीवन के लिए वेदों की ओर लौट चलें और देखें वेद जिस को हम आदि काव्य अथवा ग्रन्थ कहते हैं वे आज भी प्रासंगिक हैं अथवा नहीं ? क्या वे आज भी हमसे आधुनिक हैं अथवा नहीं ?

वेदों को भारतीय ही नहीं अपितु विश्व साहित्य का प्रथम साहित्य निर्वाद माना जाता है। वेदों की शिक्षायें जीवन के प्रारम्भिक काल से अर्थात् बाल्यकाल से ही जीवन मूल्यों को निर्धारित करती है। इसके लिए मनुष्य जीवन को चार विभागों में विभाजित किया गया था। वे विभाग हैं ब्रह्मचर्य अर्थात् निर्माण अवस्था । दूसरी अवस्था-गृहस्थ गृहस्थाश्रम अर्थात् संग्रहावस्था। तीसरी अवस्था है वानप्रस्थाश्रम अर्थात् जीवन की न्यूनताओं को दूर करके त्याग को स्थिति प्राप्त करना। चतुर्थ अवस्था संन्यास की थी जिसमें विरक्तिभाव उत्पन्न करना था। आधुनिक मनोविज्ञान के वरदान का व्यवहारवाद सबसे अधिक पर्यावरण पर जोर देता है। वास्तव में जैसे पर्यावरण में मनुष्य रहता है वैसा ही उसका निर्माण भी हो जाता है। यदि हम चाहते हैं कि हमें सर्वत्र सुख-शान्ति का वास मिले, तो जरुरी है कि हम सबको सभी के विचारों को स्वयं के लिए स्थापित कर व्यवहार रूप देना होगा। जो व्यवहार हम खुद के लिए दूसरों से ईप्सित रखते हैं वही व्यवहार हम दूसरों को भी दें, तब ये समस्या आयेगी ही नहीं। सर्वत्र शान्ति का वातावरण होगा। जब समाज में शान्ति तथा सौहार्द का वातावरण होगा तो छोटी-छोटी समस्याओं का समाधान होते-होते राष्ट्रिय समस्या का समाधान स्वत: ही हो जायेगा। यह तभी सम्भव होगा जब हम ऋग्वेद के संगठन सूक्त को अपना मुख्य रूप से आधार बना लेंगे।

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजनाना उपासते।।
समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।।
समानी वः आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।

शिक्षा संस्थानों में यह मानवीय गुणों की रक्षा तथा बोध कराने वाली शिक्षा को पाठ्यक्रम का अंग बनाना चाहिए अन्यथा परिणाम दु:खद ही होगें।

वैदिक साहित्य में ऐसे ही समाज की संरचना का वर्णन किया गया है यदि उसको साक्षात् रूप दे दिया जाये तो धरती स्वयं ही आनन्द तथा शान्ति से भर उठेगी। विश्वविद्यालयों एवं शिक्षणालयों में शुद्ध पर्यावरण बनाने पर जोर दिया। प्राचीन काल में स्वभाव और गुण भेद से चार वर्णों की कल्पना कर्मों के अनुसार की गई थी न कि जाति के आधार पर। उनका आधार अज्ञान को दूर कर ज्ञान का प्रकाश करने वाले अर्थात् निरक्षर को साक्षर बनाने वाले को ब्राह्मण, अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने वाले को क्षत्रिय और कृषि व्यापार से देश को समृद्धशाली बनाने वाले को वैश्य तथा जो पढ़ाने पर भी पढ़ न सके उसे सेवा का व्रत धारण करने के कारण शूद्र कहा जाता था। ये कोई श्रेष्ठता सूचक न होकर कर्म का सूचक होते हैं।

वेद में आदर्श पत्नी और आदर्श परिवार की संरचना का विधान भी विस्तृत रूप से किया है। मनुष्य चाहे मजदूर के रूप में हो, प्रशासक के रूप में हो, परिकर के रूप में हो, राजा तथ राष्ट्र के रूप में हो अथवा जीवन की किसी भी धारा में ही क्यों न हो सभी स्थितियों और सभी अवस्थाओं में मूल्यों की निर्धारित सीमाओं में बन्धकर रहना होगा। तभी जाकर सभ्य समाज एवं सुव्यवस्थित मानव का निर्माण हो सकेगा।

-शिवदेव आर्य...
मो.-८८१०००५०९६
अणुसंकेत-shivdevaryagurukul@gmail.com

वार्षिकोत्सव का आयोजन

आप सभी को यह जानकर अत्यन्त हर्ष होगा कि गुरुकुल यमुनातट मंझावली (हरियाणा) का २२ वॉ वार्षिकोत्सव ४, ५ एवं ६ मार्च २०१६ शुक्र, शनि एवं रविवार को भव्य सम्मेलनों के साथ मनाया जा रहा है, जिसकी पूर्णाहूति रविवार को होगी। इस कार्यक्रम में प्रसिद्ध वैदिक उपदेश, भजनोपदेशक तथा आर्यनेता आदि पधार रहे हैं जिनके अनुपम सन्देश आपको सुनने को मिलेंगे। महायज्ञ के ब्रह्मा स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती जी (गुरुकुल गोमत अलीगढ़) होंगे।

इस अवसर पर आपको गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के भाषण, भजन, कविताओं को सुनने एवं शारीरिक प्रदर्शन देखने का अवसर प्राप्त होगा।

इस अवसर पर आप स्वयं यजमान बनकर दूसरों को प्रेरित कर पुण्य के भागी बनें तथा यज्ञ में दान देकर गुरुकुल की सहायता कर कृतार्थ करें। आपके द्वारा दिया गया दान आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत छूट प्राप्त है।

आप सबसे विनम्र अनुग्रह है कि आप सभी अपने परिवार एवं इष्ट मित्रों सहित अधिक से अधिक संख्या में उपस्थित होकर धर्म लाभ उठायें।

निवेदक

आचार्य जयकुमार

सम्पर्क सूत्र : ०९७१८५७९३३३ :: Website : www.pranwanand.org/gurukul

तीरंदाजी में गुरुकुल पौन्धा का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन

२१-२२ दिसम्बर २०१५ तक देहरादून के बलूनी पब्लिक स्कूल में आयोजित जिलास्तरीय तीरंदाजी प्रतिस्पर्धा का आयोजन हुआ, जिसमें उत्तराखण्ड के सभी तीरंदाजप्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया। इस प्रतियोगिता में गुरुकुल के भी ब्रह्मचारियों ने भाग लेकर विजयश्री प्राप्त की।

आयु वर्ग १६ में ब्र. अर्जुन आर्य ने प्रथम तथा सुमित आर्य ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। और इसी प्रतियोगिता के टीम वर्ग में ब्र. अर्जुन आर्य, ब्र. सुमित आर्य, ब्र. दीपक कुमार व प्रद्युम्न आर्य ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। आर्य वर्ग २१ में ब्र. गुरुमित आर्य ने द्वितीय तथा ब्र. भूपेन्द्र आर्य ने तृतीय स्थान प्राप्त किया।

सभी विजेताओं को संस्था के संस्थापक स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी एवं आचार्य डॉ. धनञ्जय जी, आचार्य चन्द्रभूषण जी, आचार्य यज्ञवीर जी तथा अन्य समस्त आचार्यों ने शुभकामनाएँ दी।

हास्यम्-

अथ पाणिनीय सूत्राणां विदग्धकृता लोकव्यवहारसाधिका व्याख्या

❑ श्री डॉ. रघुवीर वेदालंकार......

१. **अइउ** – बच्चा उत्पन्न होने के पश्चात् सर्वप्रथम 'अ.. अ..' ही करता है। उसके बाद 'इ' उसके बाद 'उ' तदनन्तर 'ए' 'ओ' कहकर बोलना सीखता है।

२. **द्वन्द्वे घि** (२/२/३२) द्वन्द्व युद्ध आदि में घी खाना चाहिए, तभी शक्ति आयेगी।

३. **पक्षिमत्स्यमृगान् हन्ति** (४/४/३५) दुष्ट व्यक्ति आकाशचारी पक्षियों, जलचारी मत्स्य आदि तथा स्थलचारी मृग आदि पशुओं को भी खाने के लिए मारते हैं।

४. **रक्षति** (४/४/३३) धर्मात्मा व्यक्ति इन सबकी रक्षा करता है।

५. **न धातुलोपे०** (१/१/४) धातु अर्थात् रस, रक्त, वीर्य आदि धातुओं का लोप होने पर शरीर में गुण तथा वृद्धि नहीं होती। यहाँ गुण, वृद्धि अनुवृत्त हैं।

६. **भक्तिः** (४/३/९८) मनुष्य को जीवन में परमेश्वर की भक्ति करनी चाहिए।

७. **तीर्थे ये** (६/३/८७) जो लोग तीर्थे में रहते हैं, वे परमेश्वर की भक्ति करते हैं।

८. **अर्थे** (६/२/४४) व्यक्ति को धन के लिए परिश्रम करना चाहिए।

९. **न वशः** (६/२/२०) व्यक्ति तथा राष्ट्र को किसी के वश में अधीन (परतन्त्र) नहीं होना चाहिए।

१०. **जय करणम्** (६/१/२०२) सर्वदा अपने राष्ट्र की जय करनी चाहिए।

११. **नित्यं मन्त्रे** (६/१/२१०) मन्त्रों में व्यक्ति को नित्यप्रति श्रम करना चाहिए।

१२. **एको गोत्रे** (४/१/९३) एक गोत्र में विवाह नहीं करना चाहिए।

१३. **अपवर्गे तृतीया** (२/३/६) तृतीयलिङ्गी अर्थात् नपुंसक ही स्वर्ग में जाएँ। स्त्री तथा पुरुष तो संसार में ही आनन्द मनाएँ।

१४. **संस्कृतम्** (४/४/३) संस्कृत प्राचीन भाषा है। इसे पढ़ना-बोलना चाहिए।

१५. **संशयमापन्नः** (५/१/७३) संस्कृत के विना व्यक्ति संशयों में फंसा रहता है।

१६. **अन्नेन व्यञ्जनम्** (२/१/३४) अन्न को स्वादिष्ट व्यञ्जनों के साथ खाना चाहिए।

१७. **बहुव्रीहौ निष्ठा** पाणिनी की चावल खाने में अधिक निष्ठा थी। 'ओदन पाणिनीयाः' प्रसिद्धि भी है।

१८. **विप्रतिषेधे परं कार्यम्** (१/४/२) जब कई व्यक्ति आज्ञा दें तो उसमें जो सबसे बड़ा (परम्) हो, उसका ही कार्य करना चाहिए।

१९. **स्त्री पुंवच्च** (१/२/६६) आजकल स्त्रियाँ भी पुरुषों के समान व्यवहार कर रहीं हैं। और दो लड़कियाँ परस्पर विवाह भी कर लेती हैं।

२०. **चाय की** (६/१/२१) पाणिनि सूत्र बनाते समय चाय-चाय पुकारते रहते थे।

२१. **आमः** (२/४/८१) बीच-बीच में आम भी खाते जाते थे।

२२. **अअ** (८/४/६८) इति अन्त समय में भी व्यक्ति 'अ-अ' करते हुए भी संसार से जाता है।

विदग्धः विशेषेण दग्धः ईर्ष्यया मूर्ख इत्यर्थः न तु पण्डितः।
परिहासविजत्यिवमिदं परमार्थेन गृह्यतां वयः।।

'आर्ष-ज्योतिः' को घर बैठे पढ़ने के लिए क्लिक करें-

www.pranawanand.org

गणतन्त्रदिवस पर विशेष

अज्ञान, अन्याय, अभाव, शोषण मुक्त तथा सद्ज्ञानपूर्ण देश व समाज का निर्माण हो

❑ श्री मनमोहन आर्य......

हम सब भारत के नागरिक हैं। हमारा देश १५ अगस्त, १९४७ को सैकड़ों वर्षों की दासता के बाद स्वतन्त्र हुआ था। विदेशी दासता से मुक्ति के एक दिन पहले देश के एक तिहाई भाग से अधिक भाग को भारत से अलग कर दिया गया। जिस कारण से अलग किया गया उसके बाद भी अनेक धार्मिक व सामाजिक समस्यायें आज भी विद्यमान हैं। आजादी से पहले हम अंग्रेजों के गुलाम थे और इससे पूर्व हमें मुसलमानों की दासता और भीषण अत्याचार सहन करने पड़े थे। वैदिक व हिन्दू धर्म के धार्मिक अन्धविश्वासों व तदनुरूप सामाजिक व्यवस्था के कारण मुख्यत: यह पराधीनता व दु:ख आये थे। मुसलमानों के देश के बड़े भूभाग पर आधिपत्य से पूर्व भारत में भारतीय आर्य-हिन्दू राजा राज्य करते थे। चाणक्य व विक्रमादित्य के काल में भारत संगठित था और इसकी सीमायें वर्तमान से भी अधिक दूरी तक फैलीं हुईं थी। किसी समय में अफगानिस्तान, श्रीलंका, नेपाल व बर्मा या म्यंमार आदि भी भारत के ही अंग हुआ करते थे। इन सब देशों में एक ही वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति हुआ करती थी। धार्मिक अन्धविश्वास, सामाजिक विषमता व विदेशी दासता का मुख्य कारण महाभारत का महायुद्ध और उसके प्रभाव से देश में अव्यवस्था का उत्पन्न होना था। महाभारत के युद्ध में बहुत से लोग मारे गये थे तथा जो बचे थे उन्हें आलस्यजनित अकर्मण्यता ने अपने नियंत्रण में ले लिया था। महाभारत काल तक व उसके बाद चाणक्य व विक्रमादित्य के काल तक सुदूर पूर्व का भारत वैदिक धर्म और संस्कृति की छत्रछाया में उन्नत व विकसित था। वैदिक धर्म का प्रादुर्भाव सृष्टि के आरम्भ काल, १ अरब ९६ करोड़ ८ लाख ५३ हजार ११५ वर्ष पूर्व हुआ था। तब से पांच हजार वर्ष पूर्व हुए महाभारत युद्ध तक विश्व में एक ही धर्म व एक ही संस्कृति थी जिसका आधार वेद व वैदिक ग्रन्थ थे।

देश की आजादी में प्रमुख योगदान महर्षि दयानन्द, उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज और इनके द्वारा किये गये धार्मिक और समाज सुधार के कार्यों को सर्वाधिक है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ही आजादी के प्रणेता थे। सन् १८७४ में सत्यार्थ प्रकाश की रचना हुई। इसका संशोधित संस्करण सन् १८८३ में तैयार हुआ। **इस ग्रन्थ के आठवें समुल्लास में महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि कोई कितना ही करे किन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर रहित, प्रजा पर माता, पिता के समान कृपा न्याय और दया के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं होता।** सम्पूर्ण भारत के साहित्य में स्वराज्य का सर्वोपरि उत्तम होना सबसे पहले सत्यार्थप्रकाश ने ही देशवासियों को बताया। महर्षि दयानन्द के आर्याभिविनय व संस्कृत वाक्य प्रबोध आदि ग्रन्थों के कुछ अन्य वाक्य भी इसी प्रकार के आजादी के आन्दोलन का मुख्य आधार कहे जा सकते हैं। स्वराज्य सर्वोपरि उत्तम होने का अर्थ है परराज्य या विदेशी राज्य सबसे अधिक निकृष्ट व बुरा होता है और इसका अनुभव अंग्रेजी राज्य और उससे पूर्व मुस्लिम राज्य में भारत के लोगों ने किया वा भोगा है जो कि इतिहास के पन्नों पर अंकित है। महर्षि दयानन्द जी की एक अन्य बहुत बड़ी देन है कि उन्होंने मत-मतान्तरों किंवा धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया और वेद व वैदिक धर्म को सत्य की कसौटी पर सिद्ध पाया। उन्होंने इसी कारण वेदों का प्रचार किया और अन्य सभी मतों में विद्यमान असत्य व अविद्याजन्य विचार, मान्यताओं, सिद्धान्तों, आस्थाओं, कर्मकाण्डों, कुरीतियों आदि का दिग्दर्शन कराया और मनुष्य जाति की उन्नति के लिए उनका खण्डन किया। इससे यह सिद्ध हुआ कि

विश्व में सुख व शान्ति धर्म व समाज संबंधी सत्य मान्यताओं व सिद्धान्तों के द्वारा और इसके पर्याय वैदिक धर्म की स्थापना से ही लाई जा सकती है। ऐसा होने पर ही सभी मनुष्यों में एक भाव व परस्पर एक सुख-दु:ख की उत्पत्ति होनी सम्भव है।

महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों व विचारों ने स्वतन्त्रता की भावना को उद्‌बुद्ध व प्रदीप्त किया। देश में स्वतन्त्रता के लिए आन्दोलन चला। कुछ देशवासियों का विचार था कि आजादी अंहिसक आन्दोलन से मिल सकती है और कुछ विद्वानों व चिन्तकों का विचार था कि क्रान्तिकारी कार्यों को अंजाम देकर ही विदेशी हुकमरानों को देश को स्वतन्त्र करने के लिए बाध्य किया जा सकता है। दोनों ही आन्दोलन देश में चले। दोनों का अपना महत्व है। क्रान्तिकारियों को अधिक कुर्बानियां देनी पड़ी व असहय कष्ट उठाने पड़े। क्रान्तिकारियों के कार्यों से अंग्रेज शासक अधिक विचलित व परेशान होते थे और उन्हें दण्ड के रूप में कठोर यातनायें व मृत्यु दण्ड आदि बहुत कड़े दण्ड देते थे। हमें लगता है कि केवल अहिंसात्मक आन्दोलन से ही अंग्रेजों को देश छोड़ने के लिए विवश नहीं किया जा सका था। अत: क्रान्तिकारी आन्दोलन का अपना विशेष महत्व और योगदान है। इन आन्दोलनों व अंग्रेजों की अपनी परिस्थितियों के कारण देश १५ अगस्त, १९४७ को स्वतन्त्र हुआ। एक दिन पूर्व देश का विभाजन इस आधार पर किया गया कि हिन्दू और मुसलमान दो अलग कोमें हैं और यह साथ मिलकर नहीं रह सकतीं। देश का विभाजन देशभक्तों के लिए दु:खद स्थिति थी। कुछ वरिष्ठ क्रान्तिकारी तो इस सदमे को सहन न कर सके और इस दु:ख से पीड़ित होकर कुछ समय बाद उनकी मृत्यु हो गई।

देश को चलाने के लिए संविधान की आवश्यकता थी। अत: एक संविधान सभा का निर्माण किया गया। भारत के प्रथम कानून मंत्री डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर संविधान सभा के सभापति बनाये गये। संसार के प्रमुख देशों के संविधानों का अध्ययन कर भारत का संविधान बनाया गया जिसे २६ जनवरी, १९५० से लागू किया गया। भारत के संविधान की अनेक विशेषतायें हैं। लोगों को समान अधिकार दिए गये हैं, किसी भी मत व धर्म को मानने की स्वतन्त्रता दी गई है। इसी के साथ नेताओं द्वारा कश्मीर को विशेष राज्य का दर्जा, कुछ मत व वर्गों को विशेष दर्जा या अधिकार व कुछ के लिए अपना कानून आदि का अधिकार देना विचारणीय है। जैसा भारत में है, ऐसा शायद विश्व के अन्य किसी देश में नहीं होगा। हमारे देश में अनेक पूर्वाग्रहों से युक्त बुद्धिजीवी हैं। यह अपने अपने प्रकार से विचार करते हैं। कुछ जो कह देते हैं, उनकी बात सुनी जाती है, कुछ की अनसुनी या सही बातों को भी दबा दिया जाता है। हम सबके लिए स्वतन्त्रता की बात करते हैं परन्तु कई बार यह बहुत से मामलों में दिखाई नहीं देती। आज देश में एक धनिक और एक निर्धन वर्ग पैदा हो गया। निर्धन वर्ग भी ऐसा कि जिसके पास दो समय का भोजन, अपनी छत व अच्छे वस्त्र व शिक्षा के लिए आवश्यक न्यूनतम धन भी नहीं है और वहीं कुछ लोगों के पास इतना अधिक धन है कि वह उसका दुरुपयोग व कर चोरी करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। कहा जाता है कि संविधान ने सबको समान अधिकार दिये हैं परन्तु समाज में यह देखने को कम ही मिलता है। शिक्षा व चिकित्सा नि: शुल्क होनी चाहिये परन्तु यह आज करोड़ो लोगों की क्षमता से बहुत दूर है। सुरक्षा भी ईश्वर के भरोसे है। कई बार बड़े-बड़े हादसे हो जाते हैं, जनता विरोध करती है, कुछ कानूनों में परिवर्तन किया जाता है परन्तु अपराधों में रोक नहीं लगती। देश की आजादी को स्वतन्त्रता दिवस से ६७ वर्ष से अधिक और गणतन्त्र बनने से ६३ वर्ष बीत चुके हैं परन्तु आज का समाज अनके असमान मान्यताओं वाले मत-मतान्तरों, अन्धविश्वासों, पाखण्डों, अशिक्षा, अज्ञान, शोषण, अन्याय, असुविधाओं, अपराधों, निर्धनता, असमानता व अनेक दु:खों से युक्त है। सभी देशवासी एक विचार, एक भाव, एक सुख दु:ख, एक हानि-लाभ, परस्पर भाई बहिन के समान व्यवहार आदि

गुणों से युक्त नहीं हो सके और शायद कभी हो भी नहीं सकेंगे।

हमें यह भी लगता है कि परिस्थितियोंवश हमारे संविधान का निर्माण करते समय वेदों, दर्शनों, मनुस्मृति व नीति ग्रन्थों का अध्ययन कर उनकी अच्छी बातों को संविधान में सम्मिलित नहीं किया गया। वेदों और दर्शनों का सिद्धान्त है कि जिससे यह संसार बना और चल रहा है वह एक सत्ता ईश्वर है जो निराकार, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, चेतन-तत्व, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान है। इस शत प्रतिशत सही बात को भी न तो संविधान में स्थान प्राप्त हुआ और न ही देशवासी इसके अनुसार व्यवहार करते हुए दिखाई देते हैं। वैदिक काल में शिक्षा निःशुल्क, अनिवार्य व एक समान होती थी। सबको समान सुविधायें दिये जाने का विधान था तथा किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जाता था। यह उच्च आदर्श व नियम मध्यकाल में भुला देने के कारण ही देश का पतन हुआ और पराधीनता का कारण बना। आज हमारे निर्धन देशवासी शिक्षा के अभाव से ग्रस्त हैं। ईश्वर ने उन्हें मनुष्य जीवन तो दिया परन्तु अनेक व्यक्ति ऐसे भी हैं जो देश व समाज की व्यवस्था के कारण पशुओं जैसा जीवन जीने के लिए बाध्य हैं। बुन्देलखण्ड के आज भी निर्धन किसान व भूमिहीन साधनों के अभाव में घास की बनी रोटी बिना दाल व सब्जी तथा चावल के खाने के लिए मजबूर हैं। यह कैसा देश है जहां अरबपति व खरब पति लोग रहते हैं और अपने ही देश के बन्धुओं के प्रति उनमें दया, प्रेम, करूणा का भाव नहीं है। इसका अर्थ है कि वह स्वयंभू विचार वाले हैं और अन्य मनुष्यों को अपना परिवार और ईश्वर की सन्तान नहीं मानते। अतः आज आवश्यकता है कि एक स्वस्थ, शिक्षित, शोषण व अन्याय मुक्त, सभी के लिए घर, वस्त्र, भोजन, चिकित्सा, सामाजिक सुरक्षा व सत्य वैदिक ज्ञान से युक्त समाज व देश बनाने की दिशा में हमारे सभी श्रेष्ठ व अन्य बुद्धिजीवी विचार करें और एक आदर्श भारत के निर्माण की रचना व संगठन में अपना योगदान दें। जनतन्त्र व लोकतन्त्र इसी लिए आदर्श माने जाते हैं कि इसमें वैचाारिक व क्रियात्मक रूप से जनता को शिक्षा, ज्ञान, पक्षपात व अन्याय मुक्त वातावरण मिलता है। सभी को अपनी आजीविका मिलती है जिससे वह अपने जीवन को स्वस्थ व निरोग रखते हुए धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के मार्ग पर अग्रसर हो सके। इसे अभ्युदय और निःश्रेयस प्राप्त करने में संलग्न जीवन भी कह सकते हैं। हम जितना भौतिकवादी बनेंगे, जो कि आज बन गये हैं, उतना ही हम जीवन के लक्ष्यों से दूर होते जायेंगे और हमारा यह मनुष्य जीवन उद्देश्य व लक्ष्य से भटका हुआ जीवन ही कहा व माना जायेगा। हम चाहते हैं कि गणतन्त्र दिवस पर समाज में निर्धनता दूर करने, सबको समान, निःशुल्क, अनिवार्य शिक्षा प्राप्त कराने तथा सबके लिए निःशुल्क चिकित्सा व सुरक्षा की गारण्टी युक्त वातावरण के निर्माण का प्रयास होना चाहिये। इन विषयों पर बहस हो, योजनायें बने और सभी देशवासी इस कार्य में जुट जायें। अमीरी व गरीबी की खाई कम होनी चाहिये। अधिक सम्पत्ति वालों पर अधिक कर लगाकर उसे निर्धन जनता के दुःख व दर्द दूर करने में, बिना भ्रष्टाचार किये, व्यय करना चाहिये। सरकार की ओर से ऐसी योजना बने जिससे वेदों और वैदिक साहित्य पर अनुसंधान व उसके मानव जीवन पर प्रभावों का अध्ययन कर उससे लाभ उठाने के लिए प्रभावशाली प्रयत्न किये जायें। हम आशा करते हैं कि पाठक लेख पर सदभावपूर्ण रीति से विचार करेंगे।-**१९६ चुक्खूवाला-२, देहरादून**

सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् सामान्य सार्वजनिक धर्म, जिसको सदा से सब मानते आये, मानते है और मानेंगे भी इसलिए उसको सनातन नित्यधर्म कहते हैं कि जिसका विरोधी कोई भी न हो सके। – ऋषि दयानन्द

पञ्चमहायज्ञ

(स्वामी देवव्रत सरस्वती के कतिपय प्रवचनों का संग्रह)

❑ **संकलनकर्ता-आचार्य डॉ. धनञ्जय......**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उत्पन्न होते ही वह तीन ऋणों- देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण से आबद्ध हो जाता है। **ऋणं है वै जायते योऽस्ति। सजायमान एवदेवेभ्य ऋषिभ्य पितृभ्यो मनुष्येभ्य।।** शत.७/२/१

इन ऋणों से अनृण होने तथा गृहस्थ आश्रम में चूल्हा, चक्की, झाड़ू, ऊखल-मूसल आदि से जीवों की हत्या होती है। उसके प्रायश्चित के लिये ऋषियों ने पञ्च महायज्ञों का विधान किया है। मनुस्मृति कहती है-

अयाज्ययाजनैश्चैव नास्तिक्येन कर्मणा।
कुलान्याशु विनश्यन्ति यानि हीनानि मन्त्रतः।।

-मनु० ३/६५

अनधिकारी और अयोग्य व्यक्तियों के यहां यज्ञादि कराने, वेदशास्त्र एवं ईश्वर में अश्रद्धा रखने वाले और वेद स्वाध्याय से रहित कुलों का बहुत शीघ्र नाश हो जाता है।

जो कुल चाहे धन्य-धान्य में अल्प सामर्थ्यवाले हों परन्तु जिनके यहां वेदों का स्वाध्याय होता है अर्थात् वेद धन से समृद्ध कुलों की बड़े कुलों में गणना होती है और उनकी यशकीर्ति भी बढ़ती है। कुलों की इस गरिमा को बनाये रखने के लिये ही पञ्चमहायज्ञों को करना कर्तव्य बतलाया है।

ये पांच महायज्ञ पर्यावरण को सुव्यस्थित बनाने रखने में बहुत सहयोगी हैं। पर्यावरण से अभिप्राय व्यक्ति, वातावरण, समाज एवं अन्य प्राणियों में सामञ्जस्य स्थापित करना है। मनुस्मृति इनका विस्तार से वर्णन करती है-

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमोदैवो बलि भौर्तो नृयज्ञोऽतिथि पूजनम्।।

-मनु० ३/७०

१. ब्रह्मयज्ञ- वेदादि का पढ़ना-पढ़ाना, ब्रह्मचिन्तन, सन्धोपासनादि।

२. देवयज्ञ- अग्निहोत्र, दर्श पौर्णमासेष्टि, भैषज्ययज्ञादि।

३. पितृयज्ञ- माता, पिता, गुरू, वृद्धजनों की सेवा, सत्कारादि।

४. अतिथि यज्ञ, नृयज्ञ- विद्वान्, साधुजनों का सत्कार।

५. बलिवैश्वदेव यज्ञ- अन्य प्राणियों को अन्नादि देना।

पञ्चैतान्यो महायज्ञान् न हाययति शक्तितः।
स गृहेऽपि वसन्नित्यं सुनादौषौर्न लिप्यते।।७१।।

जो इन पञ्च महायज्ञों को यथाशक्ति नहीं छोड़ता अर्थात् उनका अनुष्ठान करता है वह गृह में वसता हुआ भी हिंसा के दोषों से लिप्त नहीं होता।

देवतातिथिभृत्यानां पितृणामात्मनश्च यः।
न निर्वपति पञ्चानामुच्छवसन्न सजीवति।।७२।।

जो व्यक्ति देव-विद्वान्, अतिथि, भृत्य, माता-पिता और आत्मा इन पांचों को अन्न न दे तो वह जीता हुआ भी मृतक के तुल्य है।

यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमः।।७८।।

जैसे सम्पूर्ण प्राणी वायु के आश्रय से जीते हैं वैसे गृहस्थ के आश्रम से सब आश्रम चलते हैं।

यस्मात् त्रयोप्याश्रमिणो ज्ञानेनान्नेन चान्वहम्।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्येष्ठाश्रमों गृही।।७९।।

ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ, सन्यास ये तीनों गृहस्थ पर भी अवलम्बित हैं इसलिये गृहस्थाश्रम सबसे बड़ा है।

ऋषयः पितरो देवा भूतान्यतिथयस्तथा।
आशासते कुटुम्बिभ्यस्तेभ्यः कार्य विज्ञानता।।८०

ऋषि-महर्षि, पितर, अन्य जीव तथा अतिथि ये सब कुटुम्ब परिवार वालों से आशा करते हैं। इस कारण समझदार गृहस्थों को पञ्च यज्ञों को करना चाहिये। पञ्चमहायज्ञों का महत्व जान लेने के पश्चात् इनका क्रमशः वर्णन करना उचित होगा। **-आचार्य**

गुरुकुल-पौन्धा, देहरादून-२४८००७

श्रीमद्दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय गुरुकुल गौतमनगर नई दिल्ली-४९ का ८४ वाँ वार्षिकोत्सव एवं ३४ चतुर्वेदब्रह्मपारायण महायज्ञ हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न

ऋषियों मनीषियों द्वारा प्रदत्त दिव्यज्ञान से ओतप्रोत इस वसुन्धरा पर यथा समय अनेक दिव्य आयोजन प्रायोजित होते रहे हैं। ऋषियों की वाणी के प्रचार में सतत संलग्न श्रीमद्दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय गुरुकुल गौतमनगर नई दिल्ली-४९ का ८४ वाँ वार्षिकोत्सव एवं ३४ चतुर्वेदबह्मपारायण महायज्ञ अत्यन्त हर्षोल्लास व प्रेरणा के साथ सम्पन्न हुआ।

१६ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक इस संस्था की अनुकरणीय एवं आर्यजगत् में अद्वितीय परम्परा के अनुसार प्रतिवर्ष की भाँति चतुर्वेद ब्रह्मपरायण महायज्ञ का आयोजन किया गया। इस महायज्ञ के ब्रह्मा आर्यजगत् के उच्चकोटि के विद्वान् वेदों के प्रखर प्रवक्ता डॉ॰ रघुवीर विद्यालङ्कार रहे। आपके ब्रह्मत्व में दिल्ली की आर्यजनता ने न केवल ऋचाओं द्वारा भौतिक यज्ञ किया अपितु आपके मुखारविन्द से निःसृत वेदामृत रूपी दिव्यरस का पान नित्यप्रति प्रातः सायं किया। समस्त कार्यक्रम का संयोजन आचार्य प्रियव्रत शास्त्री जी द्वारा हुआ।

ऋषि दयानन्द आर्यसमाज के नियमों में स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि 'संसार का उपकार करना इस समाज (आर्यसमाज) का मुख्य उद्देश्य है। आज विश्व आतङ्कवाद और ग्लोबलवार्मिंग साम्प्रदायिकता जैसी समस्याओं से भयाक्रान्त है। ऐसे में वैश्विक परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए इस उत्सव में अनेक सम्मेलनों का आयोजन हुआ। इनमें आर्य सम्मेलन-आर्य महिला सम्मेलन एवं गुरुकुल सम्मेलन प्रमुख थे। इन सम्मेलनों में आर्यजगत् के उच्चकोटि के विद्वानों व भजनोपदेशकों को आमन्त्रित किया गया।

५ दिसम्बर को पं॰ नारायण मुखर्जी जी की पुण्यस्मृति में श्रीमन्नारायणस्मृतिस्पर्धासमारोह का आयोजन किया गया। इस आयोजन में अखिल भारतीय गुरुकुलों की राष्ट्रियस्तर की प्रतियोगिता आयोजित की गयी। सर्वप्रथम प्रतिस्पर्धा संस्कृत वाद-विवाद की हुयी। इसका शीर्षक था - 'राष्ट्रविकासाय संस्कृतस्य योगदानमस्ति न वा? इति' इस प्रतिस्पर्धा में गुरुकुल गौतमनगर के ब्र॰ अनिल व दीपक ने प्रथम स्थान, गुरुकुल पौन्धा देहरादून के ब्र॰ प्रताप आर्य व ब्र॰ गुरुमित आर्य ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। द्वितीय शास्त्रस्मरणप्रतिस्पर्धा आयोजित हुयी। यजुर्वेद स्मरण प्रतिस्पर्धा में गुरुकुल प्रभात आश्रम के ब्र॰ प्रवीण ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। सामवेद स्मरण में गुरुकुल पौन्धा के ब्र॰ शुभम् तथा ब्र॰ निखिल आर्य ने सान्त्वना पुरस्कार प्राप्त किया।

अष्टाध्यायीस्मरण प्रतिस्पर्धा में गुरुकुल पौन्धा देहरादून के ब्र॰ भानु ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। अन्योपदेशग्रन्थों की भी प्रतिस्पर्धा आयोजित हुयी जिसमें गुरुकुल पौन्धा के ब्रह्मचारियों ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। सभी प्रतिस्पर्धाएँ स्वामी धर्मानन्द सरस्वती जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुयी, जिन्होने समस्त प्रतिभागियों को पं॰ नारायण मुखर्जी के चरित्र से सीखने की प्रेरणा देते हुए अपना आशिर्वाद दिया।

५ दिसम्बर की सन्ध्या में ऐतिहासिक गुरुकुल सम्मेलन का आयोजन हुआ जिसमें ब्र॰ राहुल, ब्र॰ रवीन्द्र आदि ने भजनों की प्रस्तुति दी। एक समूहगान भी ब्रह्मचारियों ने प्रस्तुत किया। पर्यावरण तथा देशप्रेम विषय दो लघुनाटक भी ब्रह्मचारियों ने आयोजित किये, जिसकी लोगों ने भूरि-भूरि प्रसंशा की।

६ दिसम्बर को प्रातः सात बजे से ही यज्ञ का आयोज आरम्भ हो गया। यज्ञ में भाग लेने के लिए देश के विभिन्न स्थानों से श्रद्धालु आने लग गये। सभी आगन्तुक श्रद्धालु चतुर्वेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ के पुण्य के भागी बनें। इस अवसर पर डॉ. रघुवीर विद्यालङ्कार जी द्वारा लिखित पुस्तक 'वैदिक माणिक्य' का विमोचन हुआ। इसके साथ-साथ समाज के लिए समर्पित महानुभावों को सम्मानित किया गया। इस शृंखला में सर्वप्रथम स्वामी सच्चिदानन्दयोगी जी की स्मृति में पण्डित वेदव्रत जी (आचार्य प्रिंटिंग प्रेस) का सम्मान किया गया तथा गुरुकुल पौन्धा देहरादून में अध्ययन करा रहे व्याकरण के महान आचार्य पं. यज्ञवीर शास्त्री जी को श्रीमन्नारायण जी की स्मृति में सम्मानित किया गया। साथ ही श्रीमन्नारायण जी की स्मृति में पं.रामरख आर्य जी (भजनोपदक) को भी सम्मानित किया गया।

सम्मान की शृंखला में वेदार्ष महाविद्यालय के श्रेष्ठ ब्रह्मचारियों को भी सम्मानित किया गया। जिसमें पौन्धा के स्नातक ब्र. कुलदीप तथा ब्र. शिवकुमार को स्वर्ण पदक देकर सम्मानित किया।। साथ ही गुरुकुल गौतम नगर के ब्र. प्रियव्रत को भी शास्त्रस्मरण के लिए स्वर्णपदक प्रदान किया। सभी सम्मानित ब्रह्मचारियों को स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी व अन्य सभी विद्वत्तजनों ने आशीर्वाद प्रदान किया।

श्री दीनदयाल गुप्त जी (डॉलर फॉडेशन), डॉ. अशोक कुमार चौहान जी (अध्यक्ष,एमिटि ग्रुप), श्री आनन्द कुमार जी (आई.पी.एस.), श्री योगानन्द शास्त्री जी, ठाकुर विक्रम सिंह जी, डॉ. महावीर अग्रवाल जी, स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती जी, स्वामी धर्मानन्द सरस्वती जी, स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती जी, श्री अनिल आर्य जी, श्री नरदेव यजुर्वेदी जी, पं. ओमप्रकाश वर्मा जी, पं. सत्यपाल पथिक जी, आचार्य डॉ. धनञ्जय जी, आचार्य चन्द्रभूषण जी, आचार्य जयकुमार जी, आचार्य बुद्धदेव जी, आचार्या शारदा जी आदि महानुभावों की उपस्थिति में यज्ञ की पूर्णाहुति हुई।

आर्ष न्यास द्वारा संचालित शाखा संस्थाओं के आचार्य-

१.	श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय, ११९, गौतमनगर, नई दिल्ली-४९	०९८१०४२०३७३
२.	गुरुकुल महाविद्यालय, यमुनातट, मंझावली, फरीदाबाद (हरियाणा)	०९७१८५७९३३३
३.	श्रीमद् दयानन्द आर्षज्योतिर्मठ गुरुकुल, पौंधा, देहरादून (उत्तराखण्ड)	०९४११९०६१०४
४.	गुरुकुल योगाश्रम नरसिंह नाथ, जिला-बरगढ़ (उड़ीसा)	०९३३८५५२१५१
५.	आर्ष गुरुकुल योगाश्रम, पतरकोनी, जिला-विलासपुर (छत्तीसगढ़)	०९८६८८५५१५५
६.	श्रीकृष्ण आर्ष गुरुकुल, देवालय, गोमत, जिला-अलीगढ़ (उत्तरप्रदेश)	०९४१६२६७४८२
७.	आर्य कन्या गुरुकुल, देवनगर (घुचापाली) जिला बरगड़ (उड़ीसा)	०९९३७६४९३१३
८.	पं. लेखराम आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय, वेल्लीनेषि, जि.-पालक्काट (केरल)	०९८६८००३८८०

जब अंग्रेजों ने भारत छोड़ा

❑ श्री राजेश आर्य......

प्रिय पाठकवृन्द!

जिस उत्साह से देश के वीरों ने आजादी प्राप्त करने के लिए फाँसी, गोली व जेल की यातनाओं का हँस हँसकर स्वागत किया था, आजादी के बाद देश का नेतृत्व करने वाले नेताओं ने गुलामी के चिह्न हटाने में उतनी ही अधिक उपेक्षा दिखाई। ६८ वर्ष बाद भी देश में अंग्रेजों के बनाये कानून चलने का यही कारण है। इसीलिए कुछ प्रबुद्ध नागरिकों को कभी-कभी सन्देह होता है कि १५ अगस्त १९४७ को हम आजाद हुए थे या यह केवल सत्ता का हस्तान्तरण था। अन्तर इतना ही हुआ कि गोरे अंग्रेजों की जगह काले अंग्रेज बैठ गये। आजादी के लिये घर फूँक तमाशा देखने वाले प्रसिद्ध लोग भी बेकार व लाचार खड़े देखते रह गये। देश का नेतृत्व राष्ट्रवादी की अपेक्षा अन्तर्राष्ट्रवादी बन गया। सत्ता पाने की जल्दी में हमारे नेतृत्व ने लगभग दस लाख लोगों की लाशें गिरवाकर देश का विभाजन स्वीकार किया। फिर भी अपनी अदूरदर्शिता या स्वार्थ के कारण भारत को सबका (मुस्लिम व ईसाइयों का भी) देश बना दिया।

इसका कारण बताया जाता है कि अबुल कलाम आजाद १९४२ से ४६ तक कांग्रेस के अध्यक्ष रहे। यदि ये इस पद पर रहते, तो प्रधानमंत्री बनते। पर देश भर के कांग्रेसी इनके या नेहरू जी के प्रधानमंत्री बनाये जाने के विरुद्ध थे। कांग्रेस की सात में से पाँच राज्य समितियों ने सरदार पटेल का तथा दो ने डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी का नाम प्रस्तावित किया था। प्रसाद जी ने सरदार पटेल के पक्ष में अपना नाम वापस ले लिया। इस प्रकार सरदार पटेल का कांग्रेस का अध्यक्ष बनना निश्चित हो गया, पर गाँधी जी ने नेहरू जी के प्रति अन्ध प्रेम के कारण सरदार पटेल व मौलाना आजाद से नेहरू जी के लिये अध्यक्ष पद छोड़ने को कहा। सरदार जी तो आसानी से मान गये; पर मौलाना आजाद इस शर्त पर माने कि पटेल की बजाय प्रधानमंत्री नेहरू जी को बनाया जाये और विभाजन के बाद भी भारत के सारे मुसलमानों को पाकिस्तान नहीं भेजा जाएगा। गाँधी जी ने स्वीकृति दे दी और नेहरू जी कांग्रेस के अध्यक्ष बन गये। प्रधानमंत्री बनने के बाद उन्होंने सऊदी अरब में अरबी पढ़े मौलाना आजाद को भारत का शिक्षा मंत्री बनाया।

भारत की मूल पहचान (आर्यों की आदि भूमि, वैदिक संस्कृति व संस्कृत की भूमि) को समाप्त करने के लिए अंग्रेजी सिद्धान्त (भारत मिली-जुली संस्कृति का देश) का प्रचार किया गया और उसी के अनुरूप अण्डे, मांसाहार को बढ़ावा दिया गया। गोहत्या (जिस पर कई मुगल शासकों ने भी प्रतिबन्ध लगाया था) की खुली छूट कर दी गई आक्रान्ता वर्ग को अल्पसंख्यक कहकर बहुसंख्यक के सिर पर बैठाया गया। मंदिरों के ऊपर खड़ी मस्जिदें (जो मन्दिर तोड़कर बनाई गई थी) देश के हिन्दुओं के स्वाभिमान को ललकार रही थी, नेतृत्व की तथाकथित उदारता के कारण साम्प्रदायिक झगड़ों का स्थायी कारण गई। स्वराज्य पाते ही उन्हें हटाया जाना चाहिये था। जैसा स्वाभिमानी व देश भक्त रूस ने किया था-

१९६७ ई० में लोक सभाध्यक्ष श्री नीलम संजीव रेड्डी के नेतृत्व में भारतीय सांसदों का प्रतिनिधि मंडल रूस गया। इसमें श्री हीरेन मुखर्जी (कम्युनिस्ट) व श्री दंत्तोपंत (जनसंघ) भी सम्मिलित थे। अपने भ्रमण के दौरान वे रूसी जार के शीतकालीन राजमहल पैट्रोग्रेड भी गये। वहाँ ग्रीक देवताओं की मनमोहक मूर्तियाँ थी। उन्हें देखकर श्री दंत्तोपंत जी ने रूसी मार्गदर्शक से पूछा-सभी मूर्तियाँ अति प्राचीन हैं, किन्तु ये दो-तीन मूर्तियाँ नयी क्यों हैं? मार्गदर्शक ने कहा-इन्हें द्वितीय विश्व युद्ध के बाद स्थापित किया गया है, पंत जी ने पूछा-क्यो? रूस तो एक कम्युनिस्ट और नास्तिक देश है। यहाँ मर्ति पूजा का ही नहीं, धर्म और ईश्वर तक का निषेध है, तो फिर इन मूर्तियों

की स्थापन क्यों की गई? इस पर दूभाषिये ने कहा-इन मूर्तियों या देवताओं के प्रति हमारी कोई आस्था नहीं है, यह तो हमारे राष्ट्रिय स्वाभिमान का प्रश्न है। द्वितीय महायुद्ध के समय जर्मनी के हिटलर ने रूस पर आक्रमण किया, तो पैट्रोग्रेड पहुँचते ही उसकी सेनाओं ने पहला काम इन मूर्तियों को तोड़ने का किया। हम मूर्तिपूजक हैं इसलिए नहीं, वरन् अपने राष्ट्रीय स्वाभिमान की पुनः प्रतिष्ठा और अपमान का प्रतिकार करने के लिए तोड़ी गयी मूर्तियों के स्थान पर नयी मूर्तियों को लगाया है।

जबकि उसी रूस को आदर्श मानने वाले भारतीय समाजवादी नेतृत्व (१९४७ ई. में नेहरू जी रूस में एक वामपंथी सम्मेलन में गये और कुछ ही दिन में मार्क्सवादी होकर लौटे थे) ने मुस्लिम नेताओं के कहने पर भी मन्दिर तोड़कर बनाई गई मस्जिदें हिन्दुओं को नहीं सौंपी। सरदार पटेल ने स्वाभिमान का परिचय देते हुए बार बार विधर्मी आक्रमणकारियों द्वारा तोड़े व लूटे गये विश्व प्रसिद्ध सोमनाथ मन्दिर का पुनर्निमाण आरम्भ करवाया और डा० राजेन्द्र प्रसाद ने नेहरू जी के बार-बार मना करने पर भी उसके उद्घाटन समारोह में भाग लिया। पर दुर्भाग्य से सरदार पटेल की शीघ्र (१५ दिसम्बर १९५० ई.) मृत्यु हो गई, अन्यथा अयोध्या, मथुरा, काशी आदि के मन्दिरों को भी समाधान हो जाता।

जब अंग्रेज देश छोड़कर जाने लगे, तो भारत के गौरवशाली दस्तावेज नष्ट करके गये और महत्त्वपूर्ण सामग्री अपने साथ ले गये। स्वामी विद्यानन्द विदेह ने 'नेहरु:उत्थान और पतन' में लिखा है कि जुलाई १९४७ के प्रथम सप्ताह से १५ दिन तक लाखों मन रिकार्ड और इतिहास जला दिया गया। अकेले आबू पर्वत पर मेरे देखते-देखते मुगल राज्य काल तक के, बल्कि उससे भी पूर्व के असंख्य अमूल्य रिकार्ड जला दिये गये, जिनके दहन के साथ न जाने भारत का कितना अमूल्य इतिहास भस्म हो गया। उसी दहन कार्य के ढेर में अनायास एक गुप्त किताब मेरे हाथ लगी थी-Dayanand and Arya Samaj (दयानन्द और आर्य समाज), जिसके अवलोकन से दयानन्द की वास्तविक शक्ति और उसके आर्यसमाज-आन्दोलन का सही स्वरूप स्वयं अंग्रेज सरकार की कलम से मुझे प्रथम बार मालूम हुआ था। इधर अंग्रेज यह करा रहे थे और उधर स्वयं कांग्रेसी सरकारें क्रान्तिकारियों के वीरतापूर्ण रिकार्डों में दियासलाई दिखा रही थी, इस विचार से कि यदि कभी क्रांतिकारियों का सच्चा समूचा इतिहास प्रकाश में आ गया, तो कांग्रेस के प्रभाव और बनाव का धक्का पहुँच सकता है। नेता जी और फार्वर्ड ब्लाक के वीर कारनामों के लेखे और साथ ही बंग भंग से लेकर आजाद हिन्द फौज तक के सकल क्रान्तिकारियों के वीर काण्डों के कागजात किस निर्दयता और हृदयहीनता के साथ अग्नि की लपटों के सुपुर्द कर दिया गये, उसकी स्मृति मात्र से कलेजा मुंह को आता है। (पृ. ७८-७९)

आजादी के बाद जो कुछ देश में हुआ, उसे देखकर देशभक्त छटपटाकर रह गये। भगतसिंह के अध्यापक रहे इतिहासकार जयचन्द्र विद्यालंकार ने 'भारतीय इतिहास का उन्मीलन' में लिखा है-"अंग्रेजों का छोड़ा हुआ पुराना शासनतंत्र, नौकर तंत्र और न्याय पद्धति भी ज्यों की त्यों रही। उसे ज्यों का त्यों बनये रखने पर संविधान का सबसे अधिक जोर है। नये भारतीय अधिकारियों के वेतन भी अंग्रेजों के पैमाने पर रखे गये।'

इस दशा में भारतीय वैज्ञानिकों ने भी अपनी सरकार को जगाने के लिए पुकार उठाई। २६-१२-१९५३ को मेघनाद साहा ने कहा-'भारत सरकार ने देश की अद्भुत प्राकृतिक सम्पदा के विकास के लिए कुछ नहीं किया (सात साल में)। अपने देश के वैज्ञानिकों और शिल्पियों में से अधिकांश का उपयोग नहीं कर पाई। उसी दिन चन्द्रशेखर वेंकट रांमन ने कहा-हमें अंग्रेजी शासन से विरासत में पाये अपने आत्मक्षुद्रता के भाव से छुटकारा पाना होगा। बड़ी इमारतें खड़ी करना, महँगी यन्त्रसामग्री और उसे लगाने को महंगे विज्ञ और फिर उनकी गलतियाँ सुधारने को नये महंगे विज्ञ बाहर से मँगाना, यह नहीं होना चाहिए।' किन्तु वैज्ञानिकों की पुकार भी बड़े मंत्रियों ने एक कान से सुनकर दूसरे निकाल दी।

"भारत के नेताओं ने भारत की सेना को आजाद हिन्द फौज की परम्परा पर खड़ा करने के बजाय उसी साँचे में ढालना और उसी परम्परा पर खड़ा करना तय किया था, जिसे क्लाइव और उसके साथियों ने बनाया था।....ईस्ट इंडिया कम्पनी की भाड़ैत सेना का इतिहास 'अपना इतिहास' कह कर पढ़ाया जाता है।.... उसका मुकाबला करने वाले देश भक्तों को शत्रु कहना सिखाया जाता है।....."

"दूसरी ओर हमने अपनी आजाद हिन्द फौज की देशभक्ति और प्रशिक्षा से देश की रक्षा की मजबूत नींव डालने का काम न लेकर उसे नष्ट होने दिया। १९५३-५४ में दिल्ली, पंजाब, राजस्थान, गढवाल आदि मे हजारों आजाद हिन्द फौज वाले झल्ली वाले (टोकरी वाले) बनकर रोटी कमाते थे, न केवल इन्हें अपनाया नहीं गया, प्रत्युत बिहार में जिन पुलिस वालों ने १९४६ में हड़ताल की थी, उन्हें कांग्रेसी शासन मेंदण्ड दिये गये। जिन चन्दन सिंह (गढवाली) ने १९३० में सत्याग्रहियों पर गोली चलाने से इनकार कर दिया था, उन्हें स्थानीय चुनाव में इस कारण खड़ा नहीं होने दिया गया कि वे फौजी कानून में सजायाफता थे।"

यह सर्वविदित है कि नेहरू जी ने स्वतंत्रता के बाद भी भारत का गर्वनर जनरल लार्ड माउंटबेटन को ही बनाया था। नेहरू जी तो कुछ समय के लिए किसी विदेशी को ही सेनाध्यक्ष बनाना चाहते थे। उनके निर्द्रेश पर रक्षामन्त्री सरदार बल्देव सिंह ने सेना के जनरलों की बैठक बुलाई। उसमें डूँगरपुर (राजस्थान) के मेजर जनरल नाथूसिंह भी थे। उन्होंने रक्षामंत्री से पूछा-आप किसी विदेशी को सेनाध्यक्ष क्यों बनाना चाहते हैं?

रक्षामंत्री बाले-'हमारे किसी जनरल को इतनी बड़ी सेना की कमान संभालने का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं है।' जनरल नाथू सिंह ने कहा-"फिर तो प्रधानमंत्री भी किसी विदेशी को ही बनाना चाहिये, क्योंकि हमारे किसी नेता को इतने बड़े देश का शासन चलाने का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं है।"

सभा में सन्नाटा छा गया। कुछ देर बाद रक्षामंत्री जी ने पूछा-क्या आप सेना की बागडोर सम्भाल सकते हैं? जनरल नाथूसिंह बोले-जनरल करियप्पा हम सबमें वरिष्ठ और योग्य व्यक्ति हैं। उन्हें ही यह जिम्मेदारी देनी चाहिए।" वहाँ उपस्थित अन्य जनरल भी इसी मत के थे। अत: मजबूर होकर नेहरू जी को जनरल करियप्पा को सेनाध्यक्ष बनाना पड़ा, पर माउण्टबेटन के दबाव के कारण कई अंग्रेज भारतीय सेना में कई वर्ष तक अधिकारी बने रहे। दूसरी ओर १९५० ई० में विचित्र कानून बना कर (कि कोई भी सैन्य अधिकारी चार साल से अधिक पूरी सेना या एरिया के कमाण्डर के रूप में नहीं रह सकता) थल सेनाध्यक्ष जनरल करियप्पा को ५३ वर्ष, राजेन्द्र सिंह को ५७ वर्ष, जनरल थिमैया, ले० ज० थोराट को ५५ वर्ष और नाथूसिंह को मात्र ५१ वर्ष की आयु में ही सेवानिवृत्ति कर दिया गया। लीडर शिप इन द इंडियन आर्मी में मे० ज० वी० के० सिंह ने भी ऐसा ही लिखा है।

आजाद हिन्द फौज ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद की इमारत को वह अन्तिम धक्का दिया, जिससे वह ढह गई। उससे प्रेरित होकर भारतीय सेना लगभग रातों रात विदेशी पिट्ठु सेना से देशभक्त सेना में परिणत हो गई। वायु सेना और नौसेना के विद्रोह से अंग्रेजों को यह निश्चिय हो गया कि केवल गोरी फौज से भारत पर शासन नहीं किया जा सकता। द्वितीय विश्व युद्ध में भी वह (ब्रिटेन) अमेरिका आदि देशों का बहुत ऋणी हो चुका था। अत: अंग्रेजों का भारत छोड़ना तो निश्चित था, पर भारत के निर्बल नेतृत्व की महत्त्वाकांक्षा को जानकर उन्होंने शर्त रख दी कि स्वतंत्र भारत के इतिहास में क्रान्तिकारियों का महिमामंडन न करके उन्हें उग्रवादी लिखा जाये। हम स्वतंत्रता संग्राम की जीत का श्रेय गाँधी जी और उनकी अहिंसा को देना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि सारी दुनिया में यह प्रचारित-प्रसारित हो कि अहिंसा के कारण हमने मानवीय संवेदना के वशीभूत होकर भारत छोड़ा है, क्रान्किारियों के कारण नहीं।

डॉ० सतीश चन्द्र मित्तल ने लिखा है कि भारत के राष्ट्रिय आन्दोलन में कांग्रेस के कार्यों को महिमांडित करने

के लिए सरकारी स्तर पर एक इतिहास लेखन की योजना बनी। यह कार्य भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार डा. आर. सी. महूमदार को दिया गया, जो सर्वथा सही था। इतिहास लेखन की प्रक्रिया के बीच मे ही नेहरू जी को जानकारी मिली कि इसमें सुभाष चन्द्र बोस को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जा रहा है। डॉ० मजूमदार से यह योजना छीन ली गई तथा यह कार्य डॉ० ताराचन्द को दिया गया, जो इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रोफेसर रहे थे तथा वहाँ के छात्र उन्हें मियां ताराचन्द भी कहते थे।

डॉ० आर० सी० मजूमदार ने आधुनिक भारत की इतिहास गाथा के पृ० ३५-३७ तक में शोधपत्र के हवाले से लिखा है-''जब भारत की स्वतंत्रता का इतिहास लिखा जा रहा था, तो शोध कर्ताओं को निर्देश दिये गये कि केवल उन क्रान्तिकारियों को प्रकाश में लाये, जो हिंसा में लिप्त नहीं थे। सरकार गाँधीवादी विचारधारा की पोषक है। अतः पुस्तकें राजनीति की दस्तक बनी। इतिहास को तथ्यात्मक तथा गौरवशाली न बनाकर इसे तोड़-मरोड़ दिया।''

भारत को विभिन्न सम्प्रदाय के आक्रमणकारियों की सराय मानने वाले तथाकथित समाजवादियों द्वारा जो कुछ भी भारत और भारतीय के विरुद्ध (आर्य विदेशी, मांसाहारी थे, रामायण महाभारत काल्पनिक हैं आदि) लिखा गया, उसी को स्वतंत्र देश के भोले बच्चे पढ़ते चले आ रहे हैं। स्वतंत्रता संग्राम के योद्धाओं में गाँधी जी सर्वप्रमुख हैं; महाराणा सांगा, प्रताप व शिवाजी का नाम लेना साम्प्रदायिकता कहलाता है। आज यदि भारत की वर्तमान जागरूक पीढ़ी विश्व प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी नेता जी सुभाष के बारे में जानना चाहती है, तो उसे उत्तर मिलता है कि स्वतंत्रता संग्राम कें सुभाष के योगदान के बारे में भारत सरकार के पास कोई रिकार्ड नहीं है। (इसका कारण पहले लिखा जा चुका है)

अभी अप्रैल मास में प्रसारित हुए समाचार ने देश के लोगों को चौंका दिया कि नेहरू सरकार ने आजादी के बाद १९४७ ई० से नेता जी सुभाष के परिवार की जासूसी करवाई और यह कार्य १९६८ ई० तक जारी रहा। यदि अंग्रेज ऐसा करते थे, तो बात समझ में आती है, पर नेहरू जी ने यह कार्य क्यों किया? यह व्यक्तिगत द्वेष था या अंग्रेजों का आदेश? सोचिये, क्या यह स्वतंत्र देश के देशभक्त प्रधानमंत्री का कार्य था?

लार्ड माउण्टबेटन २४ मार्च १९४७ को भारत का वायसराय बनकर आया और भारत को तोड़कर व कश्मीर समस्या को उलझाकर जून १९४८ को ईग्लैण्ड वापस जाने लगा, तो नेहरू सरकार ने उसे यात्रा व खानपान के लिए १६४००० रु० दिये थे, जबकि वीर सावरकर को स्वतंत्रता सेनानी होने की पेंशन भी नहीं दी। वीरेन्द्र घोष और भूपेन्द्रनाथ जैसे क्रान्तिकारियों की मासिक सहायता के प्रस्ताव ठुकरा दिये गये।

कहते हैं अंग्रेज अफसर राबर्ट क्लाइव ने १७६० ई० में कोलकाता में गायों की हत्या हेतु एक कत्लखाना खुलवाया था, जो बाद में ३०० तक हो गये। १८५७ में बहादूर शाहजफर ने दिल्ली की गद्‌दी पर बैठते ही गोहत्या बन्दी का कानून बनाया था, पर पण्डित नामधारी नेहरू ने गोहत्या बन्दी के विरुद्ध प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र देने की धमकी (गीदड़ भभकी) दे दी, जबकि रफी अहमद किदवई ने मुसलमान होते हुए भी साफ शब्दों में कहा था कि प्रजातंत्र का तकाजा है कि भारत मे गोवध बन्दहोना चाहिए। पर नेहरु जी ने किसी की नहीं सुनी। उसी परिणामस्वरूप आज भारत में ३६००० के लगभग तो रजिस्टर्ड कत्लखाने है और भारत एशिया का सबसे बड़ा गोमांस का व्यापारी बन चुका है। गोहत्या बन्द न करके नेहरू ने पण्डित धर्म का पालन किया या अंग्रेजों के आदेश का?

देश के अधिकांश हिस्से से राष्ट्रभाषा हिन्दी का समर्थन मिलने पर अंग्रेजी को बनाये रखना नेहरु जी की व्यक्तिगत इच्छा थी या अंग्रेजों का आदेश? और क्या राष्ट्रहित के मुकाबले व्यक्तिगत इच्छा को प्राथमिकता देनी चाहिए? यदि अंग्रेजों का आदेश था, तो १५ अगस्त १९४७ को देश स्वतंत्र कहाँ हुआ? यदि भारत के नेतृत्व में देशभक्ति

व स्वाभिमान होता, तो माउण्टबेटन को साफ शब्दों में कह दिया होता कि भारत का गवर्नर जनरल कोई भारतीय ही हो सकता है, अंग्रेज नही। राष्ट्र भाषा को १५ अगस्त १९४७ को देश स्वतंत्र कहाँ हुआ ? यदि भारत के नेतृत्व में देशभक्ति व स्वाभिमान होता, तो माउण्टबेटन को साफ शब्दों में कह दिया होता कि भारत का गर्वनर जनरल कोई भारतीय ही हो सकता है, अंग्रेज नहीं,। राष्ट्रभाषा को १५ साल का वनवास देने वालों में यदि राष्ट्रभक्ति होती, तो इस्राइल के यहूदियों की तरह घोषण की होती कि जो २४ घण्टे में हिन्दी भाषा नहीं बैठ सकता, वह अपने पद से त्यागपत्र दे दे। पर करे कौन, जब गद्‌दी पर अतिंम अंग्रेज बैठा हो। (अमेरिकी राजदूत जॉन केनेथ गलबर्थ से नेहरू जी ने कहा था-भारत पर शासन करने वाला मैं अतिंम अंग्रेज हूँ) वर्तमान सरकार के कारण देशवासियों को यह आशा है कि अब अंग्रेजी का शासन समाप्त होगा। हम अपने अतीत, अपनी संस्कृति, सभ्यता व भाषा की रक्षा व समृद्धि कर सकेंगे।

जिनकी बनी समाधि न अब तक, कोई नाम नहीं है,
झुके विनीत शीशों में जिनको, एक प्रणाम नहीं है।
इतिहासों के स्वर्ण पृष्ठ पर, लिखी न जिनकी गाथा,
जिनके स्वागत में न अभी तक, झुका किसी का माथा।
मातृभूमि के महायज्ञ में, समिधा बनी जवानी,
फिर भी कहीं न कोई कहता, जिनकी आज कहानी।
पुण्य दिवस पर आज लेखनी, गीत उन्हीं के गाये,
उन भूले बिसरों को सबकी, श्रद्धा शीश झुकाये।।

-११६६, कच्चा किला, साढौरा
यमुनानगर (हरियाणा)-१३३२०४

दयानन्देनोक्तम्

वही राजा उत्तम होता है, जो पूर्ण ब्रह्मचर्यरूप तपश्चरण से पूर्ण विद्वान्, सुशिक्षित, सुशील, जितेन्द्रिय होकर राज्य का विविध प्रकार से पालन करता है और वही विद्वान् ब्रह्मचारी की इच्छा करता और आचार्य हो सकता है, जो यथावत् ब्रह्मचर्य से सम्पूर्ण विद्याओं को पढ़ता है।

माताओं का उपकार

- ब्र. सूर्यप्रताप आर्य

माँ को पृथ्वी से भारी होने का दर्जा है।
उस माँ का सन्तान पर जन्म से कर्जा है।
जननी माँ को सन्तान का प्रथम गुरू बताया है।
उस माँ ने ही अंगुली पकड़ चलना सिखाया है।
गीले पर सोकर माँ ने सूखे में सुलाया है।
रोने पर घूम-घूम बाहों के पालने में झुलाया है।
माँ को रूलाना अपनी मौत को न्योता है।
माँ को पृथ्वी से ....।
दूजी माँ का दर्जा गौ माता को जाता है।
भूखा होने पर दूध-घी उसी का खाता है।
गऊ माँ को ही भारत का पालन हार बताया है।
गौ-मूत्र रोगों की दवा ऐसा खोजकर्ता ने बताया है।
उस गौ को मारना बहुत बड़ी खता है।
माँ को पृथ्वी से ....।
तीजी माँ सन्तान की जन्मभूमि कहाती है।
खारे-मीठे सभी अन्न यही तो उगाती है।
जिसकी विश्व में आज भी ख्याती है।
वह जन्मभूमि भारत मही कहाती है।
भगवान ही इन माताओं का सृजनहारा है।
माँ को पृथ्वी ....।
चौथी माँ वेद को जग का प्रथम ग्रन्थ बताया है।
उसकी अनुपम महिमा को जग में महान बताया है।
ज्ञान कर्म उपासना वेदत्रयी के विषय कहाते हैं।
चौथे वेद का विषय विज्ञान को बताते है।
ईश्वर ही इन वेदों का निर्माता है।
माँ को पृथ्वी ....।
समुद्र को स्याही धरा को कागज यदि लेखक बनाता है।
तब भी माता के अहसानों का अन्त न पाता है।
अत सूर्यप्रताप कहता जो इन्सान माँ को रूलाता है।
वह स्वर्ग मे क्या नरक में भी जगह ना पाता है।
यह तो सिर्फ एक कागज का पुर्जा है।
माँ को पृथ्वी ....।

पुस्तक-समीक्षा

गागर में सागर..दयानन्द सागर

❑ डॉ. हरि सिंह पाल......

पुस्तक नाम - दयानन्द सागर
लेखक - श्री भगवान दास
प्रकाशक - आर्य समाज, नांगल राय, नई दिल्ली-४६
मूल्य - २०० रुपये
पृष्ठ - ४२७

काव्य की साधना वास्तव में भाषा द्वारा भाव की साधना है। भावों की गतिशीलता का पूर्ण चित्रण काव्य द्वारा ही सम्भव है। भावों की इसी गतिशीलता के गुणों के कारण ही साहित्य मानव का अभिन्न मित्र है। जन मंगल की भावना जितने उदात्त और व्यापक रूप में काव्य में अभिव्यक्त होती है, उतनी अन्य कलाओं द्वारा संभव नहीं। इसी आधार पर साहित्य को सर्वोत्कृष्ट कला माना गया है। संस्कृत आचार्यों ने इसीलिए काव्य (साहित्य) को 'विद्या' और कला (चित्रकला और ललित कला) की उपविधा माना है। संस्कृत आचार्य भामह के अनुसार सर्गबद्ध काव्य को महाकाव्य की संज्ञा दी जाती है। महाकाव्य में नायक (चरित नायक) के जीवन की समग्र रूप से अभिव्यक्ति की जाती है। उसमें व्यक्तिविशेष के समग्र जीवन के साथ-साथ जातीय जीवन (संस्कृति) की भी व्यापक रूप से अभिव्यक्ति की जाती है। बन्ध अर्थात एक सुनिश्चित क्रम के आधार पर काव्य (भाव प्रधान या विषय प्रधान) के दो प्रमुख भेद माने गए है। -प्रबन्ध काव्य और मुक्तक काव्य। प्रबन्ध काव्य के तीन भेद माने गए हैं- महाकाव्य, काव्य (एकार्थ) और खंड काव्य।

महाकाव्य का अर्थ है- महत (महान्) काव्य। वाल्मीकि रामायण के आधार पर महाकाव्य उसे माना जाता है जो आकार में विशाल हो, जिसमें किसी महापुरुष अथवा महात्मा की प्रतिष्ठा की गई हो और उसका रचयिता कोई श्रेष्ठ मुनि हो। बाद में संस्कृत और हिन्दी आचार्यों ने महाकाव्य को परिभाषित करते हुए स्थापित किया कि महाकाव्य में कोई न महान् उद्देश्य होना चाहिए, उसमें किसी महान् घटना का वर्णन होना चाहिए साथ ही बाहयलक्षण के रूप में उसमें कथात्मकता और छन्दोबद्धता हो और सर्गबद्धता, जीवन के विविध पक्ष और समग्र रूप का चित्रण हो तथा उसमें शैली की गम्भीरता , उदात्तता और मनोहारिता के गुण होने चाहिएँ।

इस दृष्टि से शान्तः तितिक्षदन्तिश्च जितेन्द्रियः दाता दयालु नम्रश्च आर्यः गुणों से सम्पन्न आचार्य भगवानदास विरचित 'दयानन्द सागर' महाकाव्य की कसौटी पर खरा उतरता है। कुल ४७२ प्रष्ठों में समाहित और चार सर्गों (अध्यायों) तथा २४२ शीर्षकों में विभक्त यह महाकाव्य महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन चरित को समग्र के साथ उद्घाटित करने में सफल रहा है। इस महाकाव्य में तत्कालीन राष्ट्रिय, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व राजनैतिक परिस्थितियों का यथातथ्य चित्रण भी किया गया है। महाकवि आचार्य भगवान दास ने ऋषिवर दयानन्द जी के जीवन के उन प्रसंगों को सफलतापूर्वक उद्घाटित किया है जिनके द्वारा समस्त भारतीय समाज में एक नवीन क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। उनके सत्प्रयासों से ही भारतवर्ष के बिना किसी जाति, वर्ण, वर्ग, धर्म, प्रान्त और लिंग के भेदभाव के शिक्षा के द्वार सभी के लिए खुल गए अंधविश्वासों, कुरीतियों, ढोंए-ढकोसलों के कलंक से मुक्ति मिली।

विधवानारी- शूद्रों के सब बन्धन कटवाए।
संस्कृत-संस्कृति विद्यालय उनके हित खुलवाए।
छुआछूत-पाखंड-भूत के ढ़ाये भवन धड़ाम।
ऋषिवर तुम्हें प्रणाम...

इस प्रणामांजलि से इस महाकाव्य का शुभारम्भ किया गया है। महाकाव्य में कुल चार सर्ग है।, वैराग्य काण्ड, गंगा काण्ड, संगठन काण्ड और राजस्थान काण्ड। इसमें वैराग्य काण्ड में १८, गंगा काण्ड में में ७६, संगठन काण्ड में १०६ और राजस्थान काण्ड में ४२ शीर्षकान्तर्गत महाकाव्य की कथा को वर्णित किया गया है। पुस्तक खोलते ही पाठक को गायत्री मंत्र के दर्शन होते हैं।

कविवर आचार्य भगवानदास ने ऋषि दयानन्द जी के जीवन के सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रसंगों को इस महाकाव्य में

समाहित किया है जो प्रायः सामान्य चरितों में नहीं मिलते हैं। इससे स्पष्ट है कि रचयिता ने गंभीर और विशद अध्ययन व अनुशीलन इस क्षेत्र में किया है तभी इतना विशद और व्यापक वर्णन सम्भव हो पाया है। इस महाकाव्य में जहां एक ओर ऋषिवर का व्यक्तित्व एवं जीवन चरित्र व्याख्यायित हुआ है वही उनकी वाणी और उनके उपदेशों को भी बखूबी स्थान दिया गया है:-

है चिन्ता लक्ष मनुज मुक्ति, है मेरा जीवन उन कारण।
हो जाय मुक्ति उन सबकी ही, चाहे जन्म अनेको हो धारण।।
मिट जायं त्रास सब दीनों के, वे परमपिता के सुत सारे,
मेरी मुक्ति हो जाय स्वतः, सब पाय मुक्ति जन साधारण ।।
(पृष्ठ १६९)

महर्षि दयानन्द जी ने समाज के सभी वर्गों के बीच समानता का व्यवहार किया। जातिगत ऊँच-नीच का ऋषिवर के लिए कोई महत्व नहीं था। कविवर के शब्दों में-

थे समदृष्टी ऋषि दयानन्द, थी छुआछूत से उन्हें घृणा,
खाते थे शुद्ध शूद्रों के, हाथों निर्मित भोजन रुचिकर।।
(पृष्ठ ७६)

समाज में व्याप्त कुरीतियों और धार्मिक पाखंडों का स्वामी जी ने हमेशा प्रतिकार किया। कवि के अनुसार-

ऋषिराज वसेन्दू वृक्ष तले, आचरण, धर्म का करे कथन।
निज उपदेशों के साथ रोज, कुछ गप्पों का करते खण्डन।।
शाक्त, शैव, व्यभिचार, भांग, मदिरा, चोरी अरु तन्त्र ग्रन्थ,
छल,कपट,झूठ,अभिमान नशा,अरु बाम-मार्ग, प्रतिमा-पूजन।।
(पृष्ठ ७०)

आचार्य भगवान दास ने अपने महाकाव्य में ऋषिवर के जीवन के अनूठे प्रसंगों को यथावत स्थान दिया है। स्वामी जी के उपदेश से प्रेरित होकर अनेक भारतीय धार्मिक पाखंडों से मुक्त होने लगे थे। कवि के शब्दों में -

हूँ। उनके मत से सहमत मै, वेदों में नहीं मूर्ति-पूजन।
हैं तिलक-कण्ठि सब मन-कल्पित,मत-पंथ स्वार्थ के हैं साधान।।
व्रत-तीर्थ, पुराण-गरुड़ मिथ्या, गायत्री जपें वर्ण तीनों,
मैं बदल गया, अब नहीं करूँ, मन्दिर में प्रतिमा का अर्चन।।

पुराण पंथियों में देश में गलत-शलत व्याख्या करके जाति प्रथा का प्रचार किया। ऋषिवर ने इसके विरुद्ध जनमानस में नई चेतना विकसित की। महाकाव्यकार के अनुसार-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहुराजन्य कृतः।
उरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।।

मन्त्र अर्थ सुप्रसिद्ध विज्ञ, स्ससवामी विशुद्धानन्द किया-

मुख से ब्राह्मण, कर से क्षत्रिय, हैं उरु से वैश्य, शूद्र पग से।।
पैदा है सब ब्रह्मा-तन से, है तदनरूप ये चार वर्ण
कर दिया अर्थ सच्चा ऋषि ने, सुन चौंकगये सब श्रोतागण-
ये चार वर्ण हैं समाज के, इनसे ही सकल समाज बने,
ब्राह्मण मुख, क्षत्रिय भुजा तुल्य, हैं वैश्य उदर, शूद्र पद-सम।।
(पृष्ठ ५४)

इस महाकाव्य में रचयिता ने महर्षि दयानन्द के सभी शास्त्रार्थों तथा वेद प्रचारक, समाज सुधारक सभी विषयों और प्रसंगों का सुष्टु और निर्मल चित्रण किया है। ऋषि दयानन्द जी ने आर्यसमाज, गोकृष्यादि रक्षिणी सभा तथा परोपकारिणी सभा का गठन किया था। इन सभी कार्यों और प्रयासों का चित्रण भी इस महाकाव्य की अन्यतम विशेषता है। ऋषिवर ने शिक्षा के प्रचार प्रसार की बात की, सामाजिक व्यवस्था की और धार्मिक व आर्थिक विषयों पर भी अपना विवेचन किया। इस प्रकार उनकी दृष्टि से कोई भी विषय नहीं छूटा। उन्होनें अपने अनुयायियों को तर्क की कसौटी पर प्रत्येक बात को तोल कर ग्रहण करने का सिद्धान्त दिया। सभी विषय इस महाकाव्य में विशद रूप से वर्णित हुए हैं। महर्षि के जीवन पर केन्द्रित पहले भी अनेक काव्य लिखे गए हैं जिनका उल्लेख कविवर ने शुरु के पृष्ठों में ही देकर अपनी उदारता और सदाशयता प्रकट की है। वरना प्रायः सभी रचनाकार अपनी कृति को ही मौलिक और अभिनव बताते हैं। यह महाकाव्य इसलिए भी अनूठा और विशिष्ट है कि इसे लोक मानस की ग्राह्य सहज सुबोध भाषा में और प्रवाहमय गेय शैली में आचार्य भगवान दास ने प्रस्तुत कर श्रेयस्कर कार्य किया है। उनका यह श्रम समाजहित में सार्थक है। काव्यकार को बधाई और साधुवाद।

- पूर्व उप निदेशक, आकाशवाणी , दिल्ली
६८४, इन्द्रा पार्क, पालम, नई दिल्ली-४५
मो.-०९८१०९८१३९८

ब्रह्मचर्याचारः

❑ शिवदेवार्यः......✍

न्यूनातिन्यूनम् अष्टवर्षीयः बालः गुरुसमीपं गत्वा विद्यार्जनं कुर्वन् ब्रह्मचर्यं पालयेत्। गुरुः ब्राह्मणवर्णस्य सुपात्रं बालकम् अष्टमे वर्षे क्षत्रियवर्णस्य एकादशे वर्षे वैश्यवर्णस्य द्वादशे वर्षे उपनयेत्। सर्वप्रथमं शरीरशुद्धिः अर्थात् स्वच्छतया निवासविधिः, सदाचरणं सद्व्यवहारश्च, अग्निहोत्रविधिः, सन्ध्योपासनाविधिश्च शिक्ष्यते। उपनयनान्तरं आसमावर्त्तनम् अर्थात् जीवनस्य आदिमानि पञ्चविंशतिवर्षाणि यावत् प्रत्येकं मानवस्य ब्रह्मचर्यकाल एव। एषः स कालः यत्र सञ्चयः क्रियते। गुरुः स्वगर्भे स्थापितं शिष्यं जीवनोपयोगिज्ञानं समुपदिशति। अस्मिन् काले ब्रह्मचारी अपि स्वमर्यादां पालयति।

वेदाध्ययनात् पूर्वं गुरुम् अभिवादयेत्–

ब्रह्मारम्भेऽवसानं च पादौ ग्राह्यौ गुरोः सदा।

(मनु. २.७१)

अर्थात्– वेदाध्ययनस्य आदौ अन्ते च सदैव गुरोः चरणस्पर्शपूर्वकं नमेत्। वेदाध्ययन काले आदौ अन्ते च प्रणवम् उच्चारयेत्–

ब्राह्मणः प्रणवं कुर्यादादावन्ते च सर्वदा।
स्रवत्यनोङ्कृतं पूर्वं पुरस्ताच्च विशीर्यति।।

(मनु. २.७४)

अर्थात्– शिष्यः वेदाध्ययनस्य आरम्भे अन्ते च 'ओ३म्' इत्युच्चारणं कुर्यात्। ओम् उच्चारणे न कृते यत् पठितं तत्सर्वं विकीर्णमिव भवति। अन्ते यदि न उच्चारयेत् चेत् पठितं न स्थिरं भवति। पतञ्जलिनापि प्रतिपाद्यते – **तज्जपस्तदर्थभावनम्।** (योग. १.२८)

ब्रह्मचारिणे इन्द्रियसंयम उपदिश्यते मनुना –

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु।
संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान्यन्तेव वाजिनम्।।

(मनु. २.६८)

अर्थात्– यथा विद्वान् सारथिः अश्वान् नियमयति, तथैव मनः आत्मानं च कुकर्म प्रति नेतुं यानि विषयेषु लिप्तानि भवन्ति, तानि प्रयत्नतः निग्रहयेत् यतोहि इन्द्रियसंयमेन सर्वसिद्धिःअवाप्यते–

सन्नियम्य तु तान्येव ततः सिद्धिं नियच्छति।

(मनु. २.९३)

ब्रह्मचारिणे विषयत्यागो वरमेव –

प्रापणात्सर्वकामानां परित्यागो विशिष्यते।

(मनु. २.९५)

अर्थात्– कामानां विषयाणां वा भोगापेक्षया त्याग एव वरम्। यतोहि विषयी न सफलीभवति–

न विप्रदुष्टभावस्य सिद्धिं गच्छन्ति कर्हिचित्।

(मनु. २.९७)

तथा च इन्द्रियसंयमेन सर्वेषाम् अर्थानां सिद्धिर्भवति–

वशे कृत्वेन्द्रियग्रामं संयम्य च मनस्तथा।
सर्वान्सन्धायेदर्थानक्षिण्वन्योगस्तनुम्।।

(मनु. २.१००)

ब्रह्मचारी प्रातः सायं सन्ध्यां कुर्यात्। सन्ध्याफलं वर्णयति यत् प्रातः काले सन्ध्यामुपासीन जपञ्च रात्रेः मानसिकमालिन्यं दोषान् वा अपनयति जनः –

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठन्नैषमेनो व्यपोहति।
पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम्।।

(मनु. २.१०२)

प्रतिदिनं एकान्ते जलसमीपे स्थितः सगायत्री–मन्त्रोच्चारणं कुर्वीत। तदनुसारञ्च आचरेत्–

अपां समीपे नियतो नैत्यकं विधिमास्थितः।
सावित्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहितः।।

(मनु. २.१०४)

क्रमशः...

गुरुकुल-पौन्धा, देहरादूनम्

संस्कृत–शिक्षणम्

–ब्र. अनीतार्यः–

अयि सुधियः पाठकाः! संस्कृतस्य शिक्षणं न कठिनम्। संस्कृतं तु अतीव सरलं मधुरं च वर्त्तते। आगच्छत वयं प्रयोगं कृत्वा पश्यामः। एतस्मिन् विभागे व्यावहारिकज्ञानाय सरलानि कानिचन वाक्यानि सरला नियमाश्च प्रदीयन्ते। अत्र ध्यानेन पठित्वा भवन्तः अपि संस्कृतेन व्यवहारं कर्तुमर्हन्ति।

नियमः –

अस्माभि अधुना पर्यन्तं कारकप्रकरणं समासप्रकरणञ्च अधीतम्। संस्कृतवाङ्मये संस्कृतवाक्येषु सन्धीनाम् अतिप्रयोगः दृश्यते। अतः संस्कृतवाक्यानां सुललितमनोहररचनायाः कृते वयमधुना सन्धिविषयमधीमहे। तर्हिः सर्वप्रथमं जानीमहे यत् कः नाम सन्धिरिति? परस्परं वर्णानामत्यधिकसन्निकर्षः सन्धिरित्युच्यते। सन्धिः त्रिधा भवति–स्वरः व्यञ्जनः विसर्गश्च (अच्–हल्–विसर्गश्च)। अधुना वयं वृद्धिसन्धिं जानीमहे–

स्वर–सन्धिः (वृद्धिसन्धिः)

वृद्धिरेचि (अ.–६/१/८८)

अवर्णात् परः यः एच्, एचि च परतः यः अवर्णः, तयोः पूर्वपरयोः स्थाने वृद्धिः एकादेशो भवति संहितायां विषये, तच्च वृद्धिसन्धिः भवति।

सरलतयार्थः –

अ/आ+ए/ऐ=ऐ **अ/आ+उ/ ऊ=औ**

यथा–

ब्रह्म+एडका=ब्रह्मैडका	खट्वा+एडका=खटवैडका
ब्रह्म+ऐतिकायनः=ब्रह्मैतिकायनः	खट्वा+ऐतिकायनः=खट्वैतिकायनः
ब्रह्म+ओदनः=ब्रह्मौदनः	खट्वा+ओदनः=खट्वैदनः

अभ्यासार्थः–

ब्रह्म+औपगवः= ?	खट्वा+औपगवः= ?	अत्र+एषः= ?
पश्य+एतम्= ?	तण्डुल+ओदनम्ः= ?	न+एतत्= ?
देव+औदार्यम्= ?	जन+ऐक्यम्= ?	कार्य+औचित्यम्ः= ?

वाक्येषु सन्धिप्रयोगः–

संस्कृतभाषायाम्	**आर्यभाषा में**
१. भवादृशाः विरला एव म**हौष**धिं ददति।	आपके जैसे विरले ही महा ओषधि देते हैं।
२. अ**द्यै**कः पुरुषः गुरुकुले निवसति ।	आज एक पुरुष गुरुकुल में निवास करता है।